

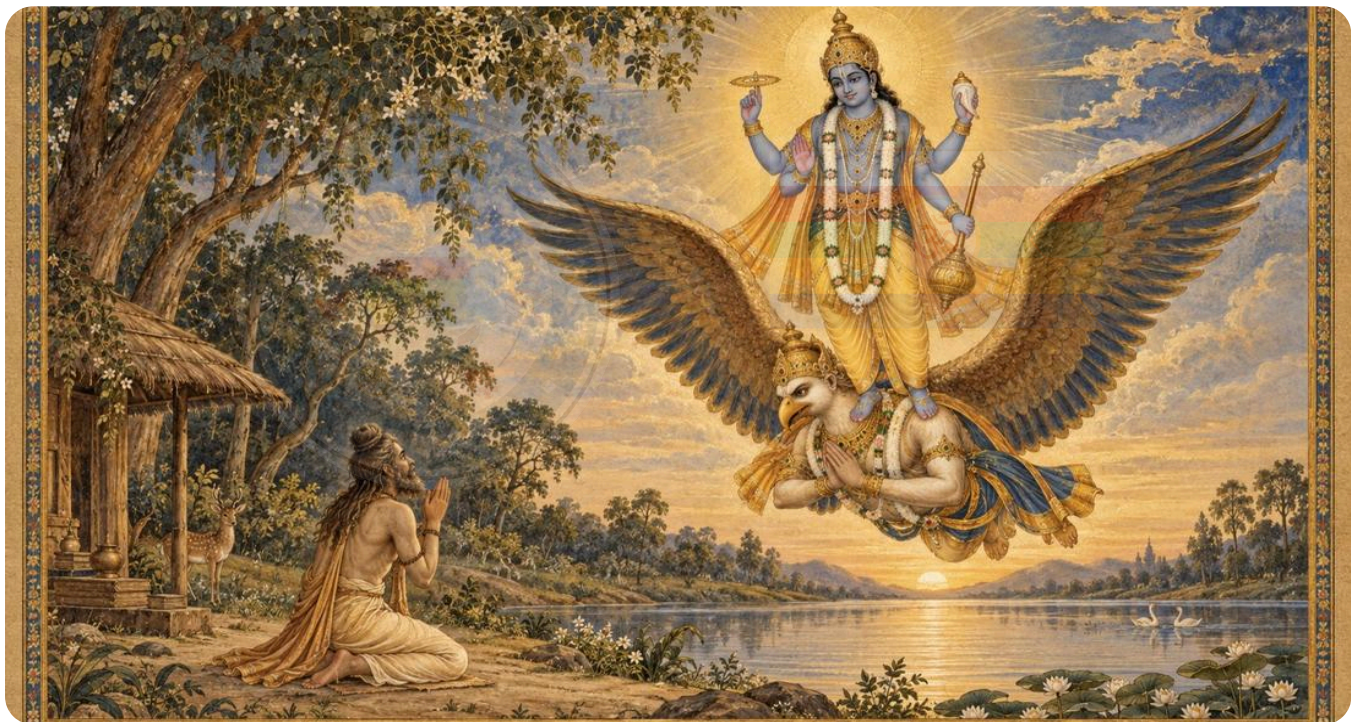
श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 3 अध्याय 21: कर्दम का तप और भगवान् का वरदान

13 September 2026

🙏 पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



दस सहस्र वर्षों से महर्षि कर्दम सरस्वती के तट पर खड़े हैं, उनका सम्पूर्ण जीवन उपासना के एक ही कर्म में सिमट गया है। अब, एक नए युग के प्रभात में, उनकी प्रतीक्षा का सागर अन्ततः अपना तट पाता है: स्वयं भगवान् गरुड़ के कन्धों पर बैठकर उस तप का उत्तर देने अवतरित होते हैं जिसे किसी और ने नहीं देखा था।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। तृतीय पुस्तक का एकविंश अध्याय हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष के भय से कुछ समय के लिए दूर होकर एक कोमल, शान्त महानता की ओर मुड़ता है। विदुर, दिति के दैत्य-पुत्रों की भयंकर जन्म-कथा सुनने के पश्चात्, अब मैत्रेय से एक सर्वथा भिन्न वंश के विषय में पूछते हैं: सम्राट् स्वायम्भुव मनु का वंश, तथा विशेष रूप से उनकी पुत्री देवहूति का भाग्य, जिसका विवाह महर्षि कर्दम से हुआ। इसके पश्चात् जो कथा आती है वह भागवत की सर्वाधिक कोमल भक्ति-सफलता की गाथाओं में से एक है — सरस्वती के तट पर दस सहस्र वर्षों का मौन तप, भगवान् का अपने अत्यन्त तेजस्वी रूप में प्राकट्य, अपनी ही अपूर्णता को स्वीकार करने वाले हृदय से अर्पित एक स्तुति, तथा एक ऐसा वरदान जो इस पूरे स्कन्ध की दिशा तय करेगा: एक वधू, नौ पुत्रियाँ, तथा समय आने पर वह दार्शनिक शिक्षा जो देवहूति से उनके ही पुत्र, महान् ऋषि कपिल, के माध्यम से प्रवाहित होगी। यह अध्याय उस वचन की पूर्ति की देहरी पर समाप्त होता है, जब स्वयं मनु अपनी पुत्री के साथ कर्दम के आश्रम में पहुँचते हैं, तथा ऋषि — जिन्हें सब कुछ बताया जा चुका है — राजा का ऐसे आदरपूर्ण शब्दों में स्वागत करते हैं कि मनु से, इस क्षण, केवल उनके आगमन का प्रयोजन ही पूछा जाता है।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 3 (तृतीय स्कन्ध)
- अध्याय: 21 (एकविंश अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: महर्षि कर्दम कठोर तप करते हैं तथा भगवान् उन्हें वरदान प्रदान करते हैं
- मुख्य वक्ता: श्रीशुक (राजा परीक्षित के प्रति बाह्य कथावाचक, पूरे अध्याय में निहित), मैत्रेय (विदुर के प्रति आन्तरिक कथावाचक), महर्षि कर्दम (भगवान् की स्तुति में, तथा बाद में मनु के प्रति सम्बोधन में), भगवान् (कर्दम को उत्तर देते हुए)
- अध्याय के भीतर मुख्य श्रोता: विदुर, मैत्रेय की कथा सुनते हुए
- मुख्य स्थल: सरस्वती के तट पर स्थित आश्रम, पावन सरोवर बिन्दुसरोवर के निकट
- मुख्य विषय: स्वायम्भुव मनु की पुत्रियों के विषय में विदुर का प्रश्न; कर्दम का दस-सहस्र-वर्षीय तप तथा उनके समक्ष भगवान् का प्राकट्य; कर्दम की समर्पण-स्तुति; देवहूति को वधू, नौ पुत्रियों तथा अन्ततः मुक्ति का वचन देने वाला भगवान् का वरदान; भगवान् का वैकुण्ठ-गमन; उसी निर्धारित दिन मनु, शतरूपा तथा देवहूति का आश्रम में आगमन; तथा मनु के प्रति कर्दम के प्रारम्भिक स्तुति-वचन
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 3, अध्याय 21, श्लोक 1–56 (गीता प्रेस क्रमांक)
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

विदुर का प्रश्न: स्वायम्भुव मनु की पुत्रियाँ

अध्याय का आरम्भ कथा से नहीं वरन् एक प्रश्न से होता है, तथा यह ध्यान देने योग्य है कि विदुर उसे कितनी सूक्ष्मता से रखते हैं। वे पूर्व के अध्यायों में स्वायम्भुव मनु के दो पुत्रों, प्रियव्रत तथा उत्तानपाद, के विषय में पहले ही जान चुके हैं, जिन्होंने पृथ्वी के सातों द्वीपों पर धर्मपूर्वक शासन किया। अब वे उसी उज्ज्वल कुल की एक भिन्न शाखा — सम्राट् की पुत्रियों — के विषय में जानना चाहते हैं। मैत्रेय संकेतमात्र में यह पहले ही बता चुके हैं कि देवहूति — मनु की पुत्री — महर्षि कर्दम की पत्नी बनी, जो ब्रह्मा द्वारा सृष्टि के विस्तार हेतु नियुक्त प्रजापतियों में से एक हैं। विदुर पूछते हैं कि इस महान् योगी ने, देवहूति के माध्यम से — जो स्वयं अष्टांग योग में निपुण राजकुमारी थीं — कितनी सन्तानें उत्पन्न

की। तथा उसी श्वास में वे उनकी दोनों बहनों — ऋचि को दी गई अकूति, तथा ब्रह्मा के पुत्र दक्ष को दी गई प्रसूति — के विषय में भी पूछते हैं, यह जानना चाहते हुए कि वे भी सन्तानोत्पत्ति में कैसे सफल हुई। यह सतही रूप से एक साधारण वंशावली-प्रश्न है, परन्तु यह भागवत की सर्वाधिक प्रिय आत्मा-और-भगवान् की प्रेम-कथाओं में से एक का द्वार खोलता है।

सरस्वती के तट पर दस सहस्र वर्ष

मैत्रेय का उत्तर एक आज्ञा तथा उसकी आज्ञाकारिता से आरम्भ होता है। ब्रह्मा ने कर्दम को “सन्तान उत्पन्न करो!” शब्दों में आदेश दिया था — वह भार जो सृष्टि के आरम्भ में प्रत्येक प्रजापति को दिया गया। परन्तु इस आदेश के प्रति कर्दम की प्रतिक्रिया कदापि औपचारिक नहीं है। स्वयं की पहल से पत्नी खोजने के बजाय, वे पहले उपासना की ओर मुड़ते हैं, सरस्वती नदी के तट पर उस अवधि तक तप करते हैं जिसे भागवत स्पष्ट रूप से कहता है: दस सहस्र वर्ष। इस विशाल कालखण्ड में, उनकी भक्ति किसी व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा की ओर नहीं वरन् स्वयं श्री हरि की ओर निर्देशित है — भगवान्, जिन्हें यहाँ सार्थक रूप से “उन लोगों को वरदान देने वाला, जो उनकी शरण में भागते हैं” कहा गया है। कर्दम विविध उपासना-विधियों द्वारा, गहन तथा अविच्छिन्न ध्यान के साथ, कुछ भी न माँगते हुए, केवल स्वयं को अर्पित करते हुए, उपासना करते हैं।

भगवान् का उत्तर ठीक उसी क्षण आता है जिसका ऐसी भक्ति अधिकारी है: सत्ययुग के आरम्भ में, चार युगों में सर्वाधिक पुण्यमय युग, कमल-नयन भगवान् — कर्दम के तप से प्रसन्न होकर — स्वयं को प्रकट करते हैं। भागवत इस प्राकट्य की प्रकृति को स्पष्ट रूप से रेखांकित करता है: भगवान् के अपने दिव्य सार से युक्त एक रूप, जो सामान्यतः केवल दिव्य शब्द — वेदों — के माध्यम से ही जाना जाता है। यह पृथ्वी की रक्षा करने वाले वराह अथवा भावी वराह-अवतार की ब्रह्माण्डीय रक्षा के समान संसार के हित हेतु अवतार नहीं है; यह एक अन्तरंग, व्यक्तिगत प्राकट्य है, जो एक ऐसी आत्मा को प्रदान किया गया है जिसका सम्पूर्ण जीवन एक ही आकांक्षा में सिमट गया था।

भगवान् का रूप: योगियों की पहुँच से परे एक दर्शन

कर्दम जो देखते हैं उसका वर्णन उसी प्रेमपूर्ण सूक्ष्मता से किया गया है जो भागवत अपने सर्वाधिक प्रिय दर्शनों के लिए सुरक्षित रखता है। भगवान् अपने विशुद्ध दिव्य रूप में, सूर्य के समान तेजस्वी, श्वेत कमलों तथा कुमुदिनियों की माला पहने, निर्मल (पीत) रेशम से सुसज्जित खड़े हैं। उनका कमल-मुख घुँघराले, गहरे केशों से घिरा है; मुकुट तथा कर्णाभूषण उन्हें सुशोभित करते हैं। अपने चारों ओर से तीन हाथों में वे अपने विशिष्ट चिह्न — शंख, चक्र सुदर्शन, तथा गदा — धारण किए हैं, जबकि चौथे में, मानो क्रीड़ावश, एक श्वेत कमल है। उनकी मुस्कुराती दृष्टि मात्र किसी को भी मोहित करने के लिए पर्याप्त है। सबसे उल्लेखनीय बात यह है कि वे गरुड़ के कन्धों पर अपने कमल-चरण रखे, आकाश में खड़े दिखाए गए हैं, उनके वक्षस्थल पर स्वर्णिम रेखा — देवी लक्ष्मी का चिह्न — दृश्यमान है, तथा प्रसिद्ध कौस्तुभ मणि उनके कण्ठ में लटक रही है।



सरस्वती के तट पर दस सहस्र वर्षों के तप के पश्चात्, कमल-नयन भगवान् सत्ययुग के प्रभात में महर्षि कर्दम के समक्ष प्रकट होते हैं, गरुड़ के कन्धों पर आकाश में खड़े, श्वेत कमलों की माला तथा शंख-चक्र-गदा से सुसज्जित (श्लोक 6-12)।

इस एकमात्र दर्शन में अपने सम्पूर्ण जीवन की आकांक्षा को साकार होते देख, कर्दम भूमि पर मस्तक टेककर साष्टांग प्रणाम करते हैं, तथा फिर उठकर भगवान् की स्तुति करने लगते हैं — उनका मन, भागवत के अनुसार, स्वाभाविक रूप से प्रेम से परिपूर्ण, उनके हाथ जुड़े हुए। इसके पश्चात् जो आता है वह कोई सपाट प्रार्थना नहीं वरन् नौ श्लोकों की एक स्तुति है, जो भागवत के इस भाग की सर्वाधिक हृदयस्पर्शी प्रार्थनाओं में से एक है।

कर्दम की स्तुति: अपनी ही अपूर्णता को स्वीकार करता हृदय

कर्दम की स्तुति स्वभावतः किसी याचना से नहीं वरन् कृतज्ञता तथा विस्मय से आरम्भ होती है: वे कहते हैं कि आज उनकी आँखों का फल पूर्णतः प्राप्त हो गया है, क्योंकि उन्होंने वह दृश्य देखा है जिसकी कामना उन योगियों को भी होती है जो जन्म-जन्मान्तर के गहन ध्यान से इसे अर्जित करते हैं। वे भगवान् के कमल-चरणों को संसार-सागर से पार जाने का यान कहते हैं — तथा फिर, आश्चर्यजनक स्पष्टवादिता के एक क्षण में, वे टिप्पणी करते हैं कि जिन लोगों को भगवान् की अपनी माया ने इन्द्रियों से वंचित कर दिया है, वे इन्हीं चरणों की उपासना केवल तुच्छ, क्षणिक इन्द्रिय-सुखों के लिए करते हैं — जो नरक में भी सुलभ हैं — तथा यह कि भगवान् अपनी उदारता में ऐसी छोटी प्रार्थनाओं को भी स्वीकार करते हैं।

ये मायया ते हतमेधसस्त्वत्-
पादारविन्दं भवसिन्धुपोतम् ।
उपासते कामलवाय तेषां
रासीश कामान्निरयेऽपि ये स्युः ॥ १४ ॥

ye māyayā te hata-medhasas tvat-pādāravindam bhava-sindhu-potam upāsate kāma-lavāya teṣāṁ rāsīśa kāmān niraye 'pi ye syuḥ

अर्थ: “हे भगवन्, जिनकी बुद्धि आपकी माया से नष्ट हो चुकी है, वे आपके कमल-चरणों की — जो इस जन्म-मृत्यु के सागर से पार जाने का यान हैं — उपासना केवल इन्द्रिय-सुख के एक क्षुद्र अंश के लिए करते हैं, जो नरकवासियों को भी सुलभ है; फिर भी आप, हे प्रभु, इतने उदार हैं कि वह भी प्रदान करते हैं।” (स्कन्ध 3, अध्याय 21, श्लोक 14)

तब वह स्वीकारोक्ति आती है जो इस स्तुति को उसकी विशिष्ट उष्णता प्रदान करती है। “आप कल्पवृक्ष हैं,” कर्दम कहते हैं, “जबकि मेरा हृदय अशुद्ध है, कामवासना से कलंकित।” वे अपनी इच्छा को नहीं छिपाते: वे अपने ही स्वभाव की एक स्त्री से विवाह करना चाहते हैं, जो उनके विवाहित जीवन में एक सच्ची कामधेनु सिद्ध हो — मनुष्य के तीनों उचित उद्देश्यों को प्रदान करने वाली। तथा इस प्रकार, अपनी अपूर्णता को जानते हुए भी, उन्होंने भी भगवान् के चरणों की शरण ली है, जो प्रत्येक वरदान के स्रोत हैं। यह शास्त्रीय ईमानदारी का एक उल्लेखनीय क्षण है: एक आत्मा भगवान् के प्रत्यक्ष आशीर्वाद की देहरी पर खड़ी होकर स्पष्ट रूप से स्वीकार करती है कि उसकी प्रेरणा अभी पूर्णतः आध्यात्मिक नहीं है — फिर भी विश्वास करती है कि भगवान् की कृपा पूर्ण प्रेरणाओं की प्रतीक्षा किए बिना अपना कार्य आरम्भ कर देती है।

तत्पश्चात् स्तुति एक ब्रह्माण्डीय दर्शन में विस्तृत हो जाती है। कर्दम वर्णन करते हैं कि यह संसार, कामना से आविष्ट होकर, भगवान् के अपने वचन — वेद — की रस्सी से एक पशु के समान बँधा है; तथा इसके विपरीत, भक्तजन भगवान् के चरणों की छत्रछाया में शरण लेते हैं, तथा एक-दूसरे के समक्ष उच्चारित भगवान् की स्तुतियों के मादक अमृत से अपनी देह-आवश्यकताओं को तृप्त करते हैं। तब वे इस अध्याय के सम्भवतः सर्वाधिक स्मरणीय बिम्ब को प्रस्तुत करते हैं: काल का चक्र स्वयं, जिसके तीन नाभि वर्ष के तीन बड़े विभागों को, तेरह अरे मासों को (प्रत्येक तृतीय वर्ष में जोड़े जाने वाले अधिमास सहित), तीन सौ साठ पर्व दिनों को, छह नेमि ऋतुओं को, तथा असंख्य पक्षों को दर्शाते हैं। यह चक्र, अत्यन्त वेग से घूमते हुए, सम्पूर्ण सृष्टि की आयु को क्षीण करता है — परन्तु, कर्दम कहते हैं, यह भगवान् के अपने भक्तों की आयु को स्पर्श नहीं कर सकता।

कर्दम अपनी स्तुति को भगवान् की योगमाया के ध्यान से समाप्त करते हैं — वह अद्भुत सृजनात्मक शक्ति जो, विरोधाभासी रूप से, स्वयं भगवान् से भिन्न नहीं है — जिसके द्वारा वे ब्रह्माण्ड को उत्पन्न करते हैं, पालते हैं, तथा अन्ततः पुनः स्वयं में समाहित कर लेते हैं, ठीक वैसे ही जैसे मकड़ी अपना जाला बुनती है, उसकी देखभाल करती है, तथा फिर उसे निगल लेती है। तथा वे इस स्वीकृति के साथ समाप्त करते हैं कि यद्यपि भगवान् स्वयं अपने भक्तों को मात्र इन्द्रिय-सुख प्रदान करने में प्रसन्न नहीं होते, फिर भी वे उन्हें भक्तों के अन्तिम कल्याण के लिए आने देते हैं, जब वे तुलसी की सुन्दर माला से सुसज्जित रूप में उनके समक्ष प्रकट हो चुके होते हैं — एक ऐसा रूप जो माया के आवरण से ही सीमित प्रतीत होता है। “मैं बारम्बार प्रणाम करता हूँ,” कर्दम कहते हैं, “आपको, जिनके कमल-चरण सबके लिए पूज्य हैं।”

भगवान् का उत्तर: पहले से तैयार एक वरदान

मैत्रेय भगवान् के उत्तर को अंकित करने से पूर्व एक छोटा परन्तु महत्त्वपूर्ण विवरण नोट करते हैं: इस प्रकार सच्चे मन से स्तुति किए जाने पर, भगवान् विष्णु — गरुड़ के कन्धों पर सुशोभित, जिनकी नाभि में कमल है — अमृत के समान मधुर स्वर में उत्तर देते हैं, उनकी भाँहें कोमलता से हिलती हुई, ऋषि की ओर स्नेहपूर्ण मुस्कान से देखते हुए। शब्दों के आने से पूर्व यह कोमलता का एक क्षण है।

“तुम्हारे मन में जो था उसे जानकर,” भगवान् कर्दम से कहते हैं, “मैंने पहले ही वह प्रबन्ध कर दिया है जिसके लिए तुमने मेरी सम्यक् उपासना की है।” वे ऋषि को आश्चस्त करते हैं कि जिन्होंने अपना मन तथा सम्पूर्ण अस्तित्व केवल उन्हीं पर अर्पित कर दिया है — विशेष रूप से कर्दम जैसी आत्माएँ — उनकी उपासना कदापि व्यर्थ नहीं जाती।

न वै जातु मृषैव स्यात्प्रजाध्यक्ष मदर्हणम् ।
भवद्विधेष्वतितरां मयि संगृभितात्मनाम् ॥ २४ ॥

na vai jātu mṛṣaiva syāt prajādhyakṣa mad-arhaṇam bhavad-vidheṣv atitarām mayi saṅgr̥bhitātmanām

अर्थ: “हे सृष्ट प्राणियों के स्वामी, मुझे अर्पित उपासना कभी व्यर्थ नहीं जाती — विशेषतः तुम्हारे समान आत्माओं की, जिन्होंने अपना हृदय तथा मन पूर्णतः मुझमें ही स्थिर कर दिया है।” (स्कन्ध 3, अध्याय 21, श्लोक 24)

तब भगवान् आश्चर्यजनक स्पष्टता से बोलते हैं: सम्राट् स्वायम्भुव मनु, अपने धार्मिक शासन के लिए विख्यात, ब्रह्मावर्त में अपनी राजधानी से, अपनी महिषी शतरूपा के साथ, ठीक परसों कर्दम को देखने आएँगे — तथा अपनी पुत्री, जो विवाह-योग्य आयु, उदात्त स्वभाव तथा प्रशंसनीय गुणों से सम्पन्न है, कर्दम को — जिन्हें भगवान् हर प्रकार से उसके योग्य घोषित करते हैं — विवाह में देंगे।

स चेह विप्र राजर्षिर्महिष्या शतरूपया ।
आयास्यति दिदृक्षुस्त्वां परश्वो धर्मकोविदः ॥ २६ ॥

sa ceha vipra rājarṣir mahiṣyā śatarūpayā āyāsyati didṛkṣus tvām paraśvo dharma-kovidaḥ

अर्थ: “वह धर्मज्ञ राजर्षि, हे ब्राह्मण, अपनी महिषी शतरूपा के साथ, परसों यहाँ आएगा, तुम्हें देखने की इच्छा से।” (स्कन्ध 3, अध्याय 21, श्लोक 26)

वह, इसके अतिरिक्त, ठीक उसी प्रकार की होगी जिस पर कर्दम ने वर्षों से अपना हृदय टिकाया है, तथा वह उनकी हृदय-तृप्ति तक उनकी सेवा करेगी।



स्नेहपूर्ण मुस्कान के साथ, भगवान् कर्दम को बताते हैं कि उनकी प्रार्थना पहले ही स्वीकृत हो चुकी है: स्वायम्भुव मनु परसों महिषी शतरूपा के साथ अपनी पुत्री देवहूति को विवाह में देने आएँगे (श्लोक 22-28)।

यह वरदान विवाह से आगे बढ़कर एक सम्पूर्ण उद्घाटित भविष्य तक विस्तृत होता है। देवहूति कर्दम द्वारा बोए गए बीज से नौ पुत्रियों को जन्म देगी, तथा उन्हीं पुत्रियों के माध्यम से मरीचि जैसे महान् ऋषि यथोचित रूप से अपनी सन्तानें उत्पन्न करेंगे — एक ऐसा वंश जो सृष्ट संसार के महत्त्वपूर्ण भागों को आबाद करेगा। तथा स्वयं कर्दम, भगवान् की आज्ञा का सम्यक् पालन करके तथा अपने समस्त कर्मों का फल उन्हें अर्पित करके, अन्ततः भगवान् को प्राप्त करेंगे — अपने विवाहित जीवन में समस्त जीवों के प्रति करुणा दिखाते हुए, आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करते हुए, तथा अन्ततः संन्यास में, अपनी आत्मा तथा ब्रह्माण्ड को भगवान् में तथा भगवान् को स्वयं में अभिन्न रूप से अनुभव करते हुए।

या त आत्मभृतं वीर्यं नवधा प्रसविष्यति ।

वीर्यं त्वदीये ऋषय आधास्यन्त्यञ्जसात्मनः ॥ २९ ॥

yā ta ātma-bhṛtaṁ vīryaṁ navadhā prasaviṣyati vīrye tvadīye ṛṣaya ādhāsyanty añjasātmanah

अर्थ: “वह तुम्हारे द्वारा बोए गए बीज से नौ पुत्रियों को जन्म देगी; तथा उनमें विद्यमान तुम्हारे ही वीर्य के माध्यम से, ऋषिगण यथोचित रूप से अपनी सन्तानें उत्पन्न करेंगे।” (स्कन्ध 3, अध्याय 21, श्लोक 29)

आगामी विवाह के उल्लास में यह अध्याय की सबसे गहन शिक्षा सरलता से छूट सकती है। भगवान् केवल वह गृहस्थ-जीवन प्रदान करके नहीं रुकते जिसकी कर्दम ने याचना की है, और उसके आध्यात्मिक अर्थ को अनुत्तरित नहीं छोड़ते; उसी श्वास में वे कर्दम को वह ठीक अनुशासन भी सौंपते हैं जिससे वही गृहस्थ-जीवन स्वयं उनकी ओर लौटने का मार्ग बन जाएगा।

त्वं च सम्यगनुष्ठाय निदेशं म उशत्तमः ।

मयि तीर्थीकृताशेषक्रियार्थो मां प्रपत्स्यसे ॥ ३० ॥

कृत्वा दयां च जीवेषु दत्त्वा चाभयमात्मवान् ।

मय्यात्मानं सह जगद् द्रक्ष्यस्यात्मनि चापि माम् ॥ ३१ ॥

tvam ca samyag anuṣṭhāya nideśam ma uśattamaḥ mayi tīrthī-kṛtāśeṣa-kriyārtho mām prapatsyase kṛtvā dayām ca jīveṣu dattvā cābhayam ātmavān mayy ātmānaṁ saha jagad drakṣyasy ātmani cāpi mām

अर्थ: “हे श्रेष्ठ ऋषि, मेरी इस आज्ञा का सम्यक् पालन करके तथा अपने प्रत्येक कर्म का फल मुझे अर्पित करके, तुम अन्ततः मुझे प्राप्त करोगे। समस्त जीवों के प्रति करुणा दिखाकर तथा उन्हें निर्भयता का आश्वासन देकर, स्थिर मन से तुम अपनी आत्मा को, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के साथ, मुझमें स्थित देखोगे, तथा मुझे अपनी ही आत्मा में स्थित देखोगे।” (स्कन्ध 3, अध्याय 21, श्लोक 30-31)

यही इस वरदान का सैद्धान्तिक मर्म है: विवाह तथा पितृत्व भगवान् द्वारा कर्दम की अभी-अपूर्ण कामना के प्रति की गई कोई रियायत नहीं है, जिसे बाद में किसी पृथक् त्याग-मार्ग से सुधारा जाएगा। अपने प्रत्येक कर्म का फल भगवान् को अर्पित करना, तथा जिन जीवों के वे भविष्य में पिता तथा मार्गदर्शक बनेंगे उनके प्रति उदासीनता के बजाय वास्तविक करुणा दिखाना — ये दोनों मिलकर ही उनकी मुक्ति की वास्तविक विधि हैं। इस प्रकार अपनाया गया गृहस्थ-जीवन भक्ति से विचलन नहीं है — यह स्वयं भक्ति की कर्मभूमि है, तथा इसी आज्ञा के द्वारा कर्दम समय आने पर वास्तव में यह देख पाएँगे कि कुछ भी भगवान् से पृथक् नहीं है।

तथा फिर यह वरदान कुछ और भी महान् की ओर पहुँचता है — एक ऐसा वचन जिसकी पूर्ति इस स्कन्ध के शेष अधिकांश भाग को व्याप्त करेगी। “अपनी पत्नी देवहूति के माध्यम से अपने दिव्य स्वरूप के एक अंश को प्रकट करते हुए,” भगवान् कर्दम से कहते हैं, “तुम्हारी नौ पुत्रियों के साथ, हे महान् ऋषि, मैं उन्हें साङ्ख्य नामक दर्शन-प्रणाली की शिक्षा दूँगा” — अस्तित्व की परम श्रेणियों, प्रकृति, पुरुष, ईश्वर आदि से सम्बन्धित विज्ञान। यह उस भावी अवतार का पहला, अस्पष्ट किन्तु स्पष्ट संकेत है जिसे इस शृंखला के भक्त भगवान् कपिल के रूप में पहचानेंगे — कर्दम तथा देवहूति के पुत्र, जो अपनी माता की भक्तिपूर्ण सेवा के प्रति कृतज्ञता में स्वयं उन्हें यही साङ्ख्य दर्शन सिखाएँगे — एक कथा जिस तक यह शृंखला आगामी अध्यायों में पहुँचेगी।

भगवान् का वैकुण्ठ-गमन

ये शब्द कहकर, भगवान् — जो, मैत्रेय के अनुसार, केवल तभी स्वयं को प्रकट करते हैं जब इन्द्रियाँ भक्तिपूर्वक अन्तर्मुखी हो जाती हैं — बिन्दुसरोवर के तट पर स्थित आश्रम से, जो सरस्वती से घिरा है, प्रस्थान करते हैं। कर्दम देखते रह जाते हैं जब भगवान् उस मार्ग से जाते हैं जो वैकुण्ठ की ओर ले जाता है — एक ऐसा मार्ग जिसकी प्रशंसा सभी महान् सिद्ध करते हैं — जाते हुए वे सामवेद के आधारभूत भजनों को सुनते हैं, जो गरुड़ — पक्षिराज — के पंखों द्वारा ही गाए जाते हैं। यह बिना किसी आडम्बर अथवा वैभव के प्रस्थान है — केवल वेदों का शान्त संगीत भगवान् के आरोहण के साथ, तथा एक ऋषि नदी-तट पर एक वचन को थामे खड़ा हुआ।

बिन्दुसरोवर: भगवान् के अपने अश्रुओं से बना सरोवर

भगवान् के प्रस्थान के पश्चात् भी, कर्दम अपने आश्रम में रहते हैं, धैर्यपूर्वक उस निर्धारित दिन की प्रतीक्षा करते हुए। इसी बीच, इस उद्धाटित वचन के दूसरी ओर, स्वायम्भुव मनु अपनी महिषी शतरूपा के साथ अपने स्वर्ण-मंडित रथ पर आरूढ़ होते हैं, अपनी पुत्री देवहूति को साथ लेकर, तथा सम्पूर्ण पृथ्वी की यात्रा करते हुए, ठीक उसी दिन जो भगवान् ने बताया था, कर्दम के आश्रम पहुँचते हैं — ऋषि, तब तक, अपने दीर्घ तप-व्रत को पूर्ण कर चुके होते हैं।

इस भेंट का वर्णन करने से पूर्व, मैत्रेय विदुर को स्वयं सरोवर का उद्गम तथा सौन्दर्य बताने के लिए रुकते हैं। बिन्दुसरोवर — शाब्दिक रूप से, “बिन्दुओं का सरोवर” — का नाम एक असाधारण स्रोत से पड़ा है: स्वयं भगवान् के नेत्रों से गिरी अश्रु-बूँदें, जो उस ऋषि के प्रति अत्यधिक करुणा से अभिभूत होकर गिरीं जिसने इतने दीर्घ तप से उनकी शरण माँगी थी। इसका जल, सरस्वती द्वारा निरन्तर पूरित, केवल हितकारी ही नहीं वरन् अमृत के समान मधुर भी है, तथा अनेक श्रेष्ठ ऋषि इसका आश्रय लेते हैं। इसके पश्चात् आने वाला वर्णन भागवत के इस भाग की सर्वाधिक सुन्दर प्राकृतिक-सौन्दर्य के अंशों में से एक है: सरोवर सभी ऋतुओं के फल तथा पुष्प वृक्षों से घिरा, प्रसन्न पक्षियों की ध्वनियों तथा मदमत्त भ्रमरों की गुंजार से जीवन्त, इसके चतुर्दिक् वन में गर्व से नृत्य करते मयूर तथा एक-दूसरे को पुकारते कोकिल। कदम्ब, चम्पक, अशोक, करंज, बकुल, आसन, कुन्द, मन्दार, कुटज तथा कोमल आम्र वृक्ष इसके तटों को घेरे हुए हैं, तथा इसका जल कारण्डव, प्लव, हंस, कुरुर, जलकुक्कुट, सारस, चक्रवाक तथा चकोरों की मधुर ध्वनियों से गूँजता है — जबकि इसके चतुर्दिक् वन में मृग, वराह, शल्यक, गयल, गज, वानर, सिंह, कपि, नकुल तथा कस्तूरी-मृग निवास करते हैं।



पावन सरोवर बिन्दुसरोवर, महर्षि कर्दम के प्रति भगवान् के अपने नेत्रों से गिरी करुणा की अश्रु-बूँदों से बना, फल-वृक्षों, गाते पक्षियों तथा कोमल वन्य-जीवों से घिरा है — वही स्थल जहाँ मनु तथा देवहूति शीघ्र ही पहुँचेंगे (श्लोक 38-44)।

यह अंश ठहरकर विचार करने योग्य है, ठीक इसलिए कि यह क्या प्रकट करता है: यह एक ऐसा भूदृश्य है जिसे, शब्दशः, दिव्य भाव ने आकार दिया है। भगवान् की करुणा एक अमूर्त भावना बनकर नहीं रह गई; उसने एक ऐसा सरोवर छोड़ा जो पीढ़ियों तक ऋषियों तथा जीवों को समान रूप से पोषण देता रहेगा — सृष्ट संसार में कृपा का एक भौतिक चिह्न।

मनु का आगमन, तथा कर्दम का स्वागत हेतु उठना

अपनी पुत्री के साथ इस अत्यन्त पावन स्थल में प्रवेश करते हुए, प्रथम सम्राट् ऋषि के निकट पहुँचते हैं तथा उन्हें बैठा हुआ पाते हैं, जिन्होंने अभी-अभी पवित्र अग्नि में आहुतियाँ अर्पित की हैं। कर्दम का स्वरूप स्वयं एक छोटा-सा चमत्कार है: दीर्घ कठोर तप करने के बावजूद, उनकी देह अधिक क्षीण नहीं है, क्योंकि दो कृपाओं ने उन्हें धारण किया है — भगवान् की अपनी स्नेहपूर्ण दृष्टि उन पर पड़ी, तथा उन्होंने भगवान् के चन्द्र-समान वचनों से बहते अमृत को अपने कानों से पान किया। उन्हें ऊँचे कद, कमल-पत्रों जैसे बड़े नेत्रों, जटाजूट केशों, चिथड़ों में लिपटे, तथा अनगढ़ रत्न के समान अव्यवस्थित दिखने वाले बताया गया है।



भगवान् द्वारा बताए गए ठीक उसी दिन, स्वायम्भुव मनु अपने स्वर्ण-रथ पर महिषी शतरूपा तथा अपनी पुत्री देवहूति के साथ बिन्दुसरोवर के निकट कर्दम के आश्रम पहुँचते हैं (श्लोक 35-48)।

सम्राट् को आश्रम में आते देख, कर्दम उनके समक्ष प्रणाम करते हैं, आशीर्वचनों से उनका अभिनन्दन करते हैं, तथा उन्हें सम्पूर्ण सम्मान के साथ ग्रहण करते हैं। सम्राट् के शान्त तथा संयत होकर बैठ जाने के पश्चात् ही, ऋषि — भगवान् द्वारा कही गई सभी बातों का स्मरण करते हुए — बोलना आरम्भ करते हैं, अपनी कोमल वाणी से मनु को प्रसन्न करते हुए।

कर्दम की स्तुति: “आप स्वयं भगवान् विष्णु से भिन्न नहीं हैं”

कर्दम मनु से जो कहते हैं वह स्वयं में राजधर्म का एक लघु सिद्धान्त है। वे मनु से कहते हैं कि उनकी पृथ्वी-यात्रा निश्चय ही सज्जनों की रक्षा तथा दुर्जनों के विनाश हेतु की गई है, क्योंकि राजा साक्षात् श्री हरि की रक्षक शक्ति के अवतार हैं। यह राजा ही है, कर्दम कहते हैं, जो आवश्यकतानुसार सूर्यदेव, चन्द्रदेव, अग्निदेव, इन्द्र, वायुदेव, यम, धर्म, तथा वरुण के कार्यों को ग्रहण करता है — तथा इसलिए वे मनु को स्वयं भगवान् विष्णु से भिन्न न मानकर उनका अभिनन्दन करते हैं। यदि राजा अपने रत्नजड़ित, सदा-विजयी रथ पर संसार में विचरण न करे, अपने भीषण धनुष की टंकार न करे, अपनी सेना के आतंक से दुष्टों के हृदय को कम्पित न करे, तथा अपनी सेनाओं की पदचाप से पृथ्वी को न

हिलाए, तो, कर्दम चेतावनी देते हैं, वर्णों तथा आश्रमों को नियन्त्रित करने वाला नैतिक विधान — जो स्वयं भगवान् द्वारा स्थापित है — उसी क्षण अधर्मी मनुष्यों द्वारा भंग हो जाएगा। लोभी तथा उच्छृंखल जनों के कारण अधर्म फलेगा-फूलेगा, तथा संसार, अपने वास्तविक रक्षक से त्यक्त होकर, विनाश की ओर बढ़ जाएगा।

इस विस्तृत स्तुति के पश्चात् ही कर्दम अन्ततः वह प्रश्न पूछते हैं जिसकी ओर सम्पूर्ण अध्याय शान्त भाव से बढ़ रहा था। “फिर भी,” वे कहते हैं, “मैं आपसे, हे वीर राजन्, आपके यहाँ आने का प्रयोजन पूछता हूँ; प्रसन्न हृदय से हम आपकी इच्छा पूर्ण करेंगे।”

अथापि पृच्छे त्वां वीर यदर्थं त्वमिहागतः ।

तद्वयं निर्व्यलीकेन प्रतिपद्यामहे हृदा ॥ ५६ ॥

athāpi prcche tvām vīra yad-arthaṁ tvam ihāgataḥ tad vayaṁ nirvyalikena pratipadyāmahe hṛdā

अर्थ: “फिर भी मैं आपसे, हे वीर, आपके यहाँ आने का प्रयोजन पूछता हूँ; जो भी वह हो, हम उसे सच्चे हृदय से, बिना किसी कपट के, पूर्ण करेंगे।” (स्कन्ध 3, अध्याय 21, श्लोक 56)

तथा वहीं, इस सौम्य, अपूर्ण प्रश्न पर — कर्दम वास्तव में यह भली-भाँति जानते हुए भी कि मनु किस लिए आए हैं — यह अध्याय समाप्त हो जाता है।



भगवान् के अपने वचनों का स्मरण करते हुए, महर्षि कर्दम राजा स्वायम्भुव मनु को विष्णु की रक्षक-शक्ति के अवतार रूप में सम्मानित करते हैं, तत्पश्चात् — सुविज्ञ शिष्टाचार के साथ — उनकी राजकीय यात्रा का प्रयोजन पूछते हैं (श्लोक 49-56)।

इस अध्याय को मुख्य शिक्षाएँ

1. सच्ची, सतत भक्ति कभी व्यर्थ नहीं जाती, चाहे उसे फल देने में कितना भी समय लगे। सरस्वती के तट पर दस सहस्र वर्षों का तप अन्ततः स्वयं भगवान् के प्राकट्य से मिलता है — यह स्मरण कराते हुए कि आध्यात्मिक धैर्य स्वयं में श्रद्धा का एक रूप है (श्लोक 6-8)।
2. कृपा अपना कार्य आरम्भ करने के लिए पूर्णतः शुद्ध प्रेरणा की प्रतीक्षा नहीं करती। कर्दम खुलकर स्वीकार करते हैं कि उनका हृदय अभी कामना से मुक्त नहीं है, तथा वे केवल मुक्ति के बजाय पत्नी की याचना करते हैं — फिर भी भगवान् इस अपूर्ण प्रार्थना का उत्तर बिना किसी हिचकिचाहट के उदारता से देते हैं, इसे उसी द्वार के रूप में उपयोग करते हुए जिससे महान् वरदान, तथा अन्ततः स्वयं भगवान् कपिल, संसार में प्रवेश करेंगे (श्लोक 14-15, 32)।
3. भगवान् का समय सटीक होता है, चाहे याचना स्वयं सटीक न हो। भगवान् कर्दम को ठीक-ठीक बताते हैं कि मनु किस दिन आएँगे — यह एक छोटा किन्तु आश्चर्यजनक प्रमाण है कि दैवी प्रबन्ध वास्तविक, व्यावहारिक शुद्धता के साथ कार्य करता है, न कि किसी अस्पष्ट अथवा दूरस्थ वचन के साथ (श्लोक 26)।
4. करुणा सृष्ट संसार पर एक स्थायी चिह्न छोड़ती है। सरोवर बिन्दुसरोवर, एक भक्त के प्रति भगवान् की करुणा के अश्रुओं से बना, पीढ़ियों तक ऋषियों, पक्षियों तथा जीवों को समान रूप से पोषण देता रहता है — एक बार दी गई कृपा केवल विलीन नहीं होती वरन् संसार के अपने ताने-बाने का भाग बन जाती है (श्लोक 38-39)।
5. सच्चा राजत्व सेवा है, विशेषाधिकार नहीं। मनु के प्रति कर्दम की स्तुति राजा की महानता को पूर्णतः धर्म के रक्षक तथा दुष्टों के संहारक के रूप में उसके कार्य में स्थापित करती है — राजा का सम्मान उसके मुकुट के लिए नहीं वरन् उस भार के लिए किया जाता है जो वह सबकी ओर से वहन करता है (श्लोक 50-55)।
6. भगवान् के वरदान की देहरी पर खड़ी आत्मा भी विनम्र, धैर्यवान् तथा निरहंकारी बनी रहती है। कर्दम, जो भगवान् के अपने वचन से यह पहले से भली-भाँति जानते हैं कि मनु किस लिए आए हैं, फिर भी अहंकार के बजाय विनम्रता से प्रश्न पूछते हैं, तथा प्रसन्न एवं ईमानदार हृदय से राजा की इच्छा पूर्ण करने का प्रस्ताव देते हैं (श्लोक 56)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय में एक विशेष मधुरता है जो इसे पूर्व के अध्यायों की गर्जनापूर्ण नाटकीयता से पृथक् करती है। यहाँ न कुछ लड़ा जाता है, न कुछ जीता जाता है; न कुछ नष्ट होता है। इसके विपरीत, एक साधारण मानवीय आकांक्षा — पत्नी के लिए, स्थिर जीवन के लिए, उन साधारण वरदानों के लिए जो एक गृहस्थ-जीवन को सम्भव बनाते हैं — दस सहस्र वर्षों की अटूट भक्ति के माध्यम से, भगवान् के अपने प्राकट्य का, तथा अन्ततः इस सम्पूर्ण परम्परा के महानतम आचार्यों में से एक के जन्म का अवसर बन जाती है। कर्दम कामना से परे होने का दिखावा नहीं करते; वे स्पष्ट रूप से कहते हैं कि उनका हृदय अशुद्ध है, कि वे वही चाहते हैं जो अधिकांश लोग चाहते हैं। तथा यही ईमानदारी, भगवान् से छिपाने के बजाय उनके चरणों में अर्पित की गई, वह है जिसका भगवान् इतनी कोमलता से उत्तर देते हैं। प्रत्येक उस भक्त के लिए यहाँ कुछ है जिसने कभी अनुभव किया हो कि उसकी अपनी प्रार्थनाएँ बहुत छोटी, बहुत व्यक्तिगत, साधारण मानवीय इच्छाओं में बहुत उलझी हुई हैं, दिव्य ध्यान के योग्य होने के लिए। भागवत का उत्तर, इस अध्याय के माध्यम से कोमलता से दिया गया, यह है कि कोई भी सच्चे मन से अर्पित प्रार्थना बहुत छोटी नहीं होती — कि भगवान् हमें ठीक वहीं मिलते हैं जहाँ हमारा हृदय वास्तव में है, तथा उस मिलन से, अपने ही समय में, हमारी याचना से भी बड़ी बातें साकार हो सकती हैं।

एक दैनिक भाक्ते-अभ्यास

आज, उस एक इच्छा को स्मरण करें जिसे आप प्रार्थना में व्यक्त करने में हिचकते रहे हैं — इसलिए नहीं कि वह गलत है, वरन् इसलिए कि वह बहुत साधारण, बहुत व्यक्तिगत, सांसारिक सुख से बहुत जुड़ी हुई प्रतीत होती है, आध्यात्मिक ध्यान के योग्य होने के लिए। कर्दम की भाँति, उसे उससे अधिक उन्नत दिखाने का प्रयास किए बिना, ईमानदारी से अर्पित करें। यह दिखावा करने की आवश्यकता नहीं है कि आपका हृदय उससे अधिक शुद्ध है जितना वह वास्तव में है; केवल इतनी आवश्यकता है कि उस हृदय को, जैसा वह है, भगवान् के चरणों में ले आएँ। अपने दिन के कार्यों की ओर मुड़ने से पूर्व, रुककर शान्तिपूर्वक दोहराएँ: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” इस स्मरण को याद दिलाने दें, जैसे उसने कर्दम को दस सहस्र वर्षों की प्रतीक्षा में याद दिलाया, कि भक्ति में अर्पित धैर्य कभी उपेक्षित नहीं होता, तथा एक ईमानदार हृदय के प्रति भगवान् का उत्तर सदैव, अपने ही समय में, स्वयं प्रार्थना से भी अधिक उदार होता है।

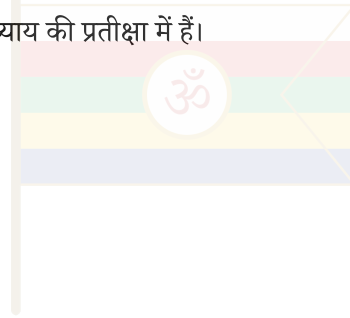
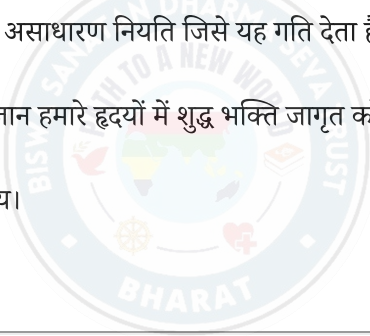
उपसंहार

तृतीय पुस्तक का एकविंश अध्याय शान्त पूर्ति का एक अध्याय है — आज्ञाकारिता में आरम्भ हुए तथा प्रेम से पोषित तप का चिरप्रतीक्षित उत्तर, तथा उस वंश की ओर पहला दृश्य कदम जो इस स्कन्ध के शेष भाग को आकार देगा। यह उपयुक्त रूप से किसी समाधान से नहीं वरन् एक आमन्त्रण से समाप्त होता है: मनु कर्दम के समक्ष बैठे हैं, ऋषि की स्तुति अभी-अभी कही गई है, तथा एक प्रश्न — “आपके आने का प्रयोजन” — जिसका उत्तर दोनों पुरुष, तथा वह प्रत्येक पाठक जिसने भगवान् के अपने वचन का यहाँ तक अनुसरण किया है, पहले से जानते हैं। विवाह स्वयं, तथा वह असाधारण नियति जिसे यह गति देता है, आगामी अध्याय की प्रतीक्षा में हैं।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।



सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, पूर्ण), तृतीय पुस्तक, एकविंश अध्याय, आन्तरिक पृष्ठ 228–233।
- शृंखला: Srimad Bhagavatam Wisdom · Biswa Sanatan Dharma Seva Trust।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र की आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा सिफ़ारिश के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान् पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं तथा उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद अथवा टीका की प्रतिलिपि नहीं है। किसी भी प्रकाशक द्वारा सम्बद्धता अथवा समर्थन का कोई संकेत नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-3-chapter-21-kardama-ka-tap-aur-bhagwan-ka-vardan.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम् • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

